

सूफी प्रेमाख्यानक काव्य की सैद्धांतिकी

डॉ. राजेश मिश्र

हिन्दी विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत।

प्रस्तावना

हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान रचनाकारों ने ईश्वरीय प्रेम को ही अपना चरम लक्ष्य माना है। सूफी प्रेम के साधकों का प्रमुख उद्देश्य ईश्वर प्रेम की ओर अग्रसर होना रहा है। मानवीय प्रेम से ईश्वरीय प्रेम की ओर अग्रसर होते हुए मिलन की उत्कंठा की मार्मिक व्यंजना इन कवियों की प्रधान विशेषता रही है। इस प्रेम में उन्होंने सृष्टि और कर्ता के बीच के संबंधों को भी व्याख्यायित किया है। इन सूफी कवियों का लेखन जन-जीवन में प्रेम का सन्देश पहुंचाने के उद्देश्य से पूरा हुआ था जिसमें कविता को वे एक माध्यम के रूप में स्वीकार करते हैं। वे कविता करने के लिए कविता नहीं करते थे फिर भी उनकी रचनाओं में साहित्यिक सौन्दर्य और सौष्ठव का सहज विकास दिखाई पड़ता है। सूफी मतवाद जीवन की उपेक्षा कभी नहीं करता। सूफी कवियों के कथा-पात्र सिर्फ काल्पनिक न होकर लौकिक और गृहस्थ भी थे। कुछ कथानक के पात्र लोक कथाओं के जीवित पात्र रहे हैं जो कभी समाज में जीवन यापन करते थे और कालान्तर में जिनकी कथा लोक समाज की मौखिक परंपरा में ढलकर अमर हो गयी।

मानव हृदय की नैसर्गिक भावनाओं का, यह काव्य-रूप, प्रेम की पीर को आख्यान के रूप में ढालकर लोक हृदय की संवेदना को उद्बलित करने के लिए प्रस्तुत की गयी है। दाम्पत्य, काम, सत, अध्यात्म, इन सभी दृष्टियों से ये प्रेमाख्यानक रचे गए हैं। विरह की दारुण व्यथा, आत्म-समर्पण का भाव, प्रेम की स्निग्ध पुकार, इन सभी प्रेमाख्यानक के विषय वस्तु बने हैं। इसी कारण लोक हृदय को मोहित करने और साधना को संगी बनाकर अपनी जीवन स्थितियों में महसूस करने का भाव यहाँ के साहित्य की विलक्षण विशेषता है। साहित्यिक संवेदना, लोक की संवेदना से संभवतः पहली बार इतने मार्मिक ढंग से घुल-मिल पाई है।

जिस काव्य में सौन्दर्य की अनुभूति होगी, उसकी विलक्षण लोक-ग्राह्य क्षमता होगी और उतनी ही सशक्त अभिव्यंजना की कुशलता होगी, उसे निस्संदेह उच्च कोटि की रचना माना जाएगा। सूफियों के पूरे साहित्य में सौन्दर्य की एक विराट, मर्मस्पर्शी प्राणधारा विद्यमान है। सौन्दर्य की यही प्राणधारा उनके साहित्य की आत्मा बनी है। अपने एकान्तिक प्रेम को अभिव्यक्त करने में सूफियों को, प्रेमाख्यानकों को अपना माध्यम बनाने से सुविधा मिली। 'मानुष प्रेम भयऊ बैकुंठी'। मृगावती, मधुमालती, पद्मावत, चित्रावली, ज्ञानदीप, कुतुबमुशतरी, सैफुलमुलूक, वदीउलजमाल,

चन्द्रबदन और महियार आदि सभी प्रेमाख्यानकों में हृदय की यह गहरी अनुभूति साफ दिखाई पड़ती है जिसके आधार भारतीय गृहस्थ-प्रेम के आख्यानक रहे हैं। शाश्वत सौन्दर्य को अनुभूत करने के प्रयत्न में ये सूफी कवि सौन्दर्य की वाह्य सीमा का अतिक्रमण करके उसकी अन्तरात्मा में प्रवेश कर जाते हैं इसी कारण इनके काव्य का सहज, लोकग्राह्य और प्रांजल स्वरूप अपनी विशिष्ट निर्मिति पा सकी।

हिन्दी सूफी प्रेमाख्यान परम्परा के विषय में दो तरह के विचार विद्वानों में देखने को मिलते हैं। एक वर्ग उन विद्वानों का रहा है जो सूफी प्रेमाख्यानकों के विकास को फ़ारसी की मसनवी शैली की अविच्छिन्न भावधारा का सहज विकास मानता रहा है। और दूसरा वर्ग इन प्रेमाख्यानकों का सम्बन्ध प्राकृत अपभ्रंश के भारतीय चरित काव्यों से जोड़कर देखने का आग्रही रहा है। इन दोनों से अलग कुछ ऐसे विद्वान भी हैं जो सूफी प्रेमाख्यानकों के विकास में भारतीय और फ़ारसी दोनों शैलियों के सामंजस्य को रेखांकित करते हैं। हिन्दी के सूफी साहित्य में 'सम्भोग के चित्रण' अपने स्रोत की खोज में शोधकर्ताओं को भ्रमित करते रहते हैं क्योंकि फ़ारसी शैली की मसनवी पद्धति के प्रेमाख्यानकों में सम्भोग के ये दृश्य नहीं मिलते। संस्कृत-प्राकृत साहित्य में ये दृश्य पर्याप्त हैं। इसलिए ऐसे चित्रणों को भारतीय साहित्य लेखन के प्रभाव के रूप में देखना होगा।

लेकिन तब भारतीय सूफी प्रेमाख्यानकों की विकास की धारा को भारतीय चरित काव्य के प्रभाव से संयमित मानना आवश्यक हो जाएगा। हिन्दी के सूफी कवि प्रेम की परिणति 'विवाह' में करते हैं जबकी फ़ारसी मसनवी प्रेमाख्यानक विरह-प्रधान रहे हैं। नायिका की शादी यदि होती भी है तो किसी तीसरे से, नायक से नहीं। इसी कारण फ़ारसी प्रेमाख्यानों में चित्रित प्रेमी तड़प, दर्द, चीत्कार और विक्षिप्ता के चरम पर उहात्मक प्रेम ही प्राप्त कर पाए हैं। लैला मजनूं में लैला की शादी मजनूं से न होकर 'इब्नेसलाम' से होती है। 'शीरी-फ़रहाद' में नायिका का वैवाहिक सम्बन्ध फ़रहाद से न होकर खुसरो परवेज़ से होती है। प्रेम की उच्च भावभूमि की व्यंजना इन नायक नायिकाओं के आकर्षण और समर्पण का आधार रही है। इस भावभूमि की व्यंजना 'जामी' के शब्दों में देखें- 'उनके (प्रेम के) सौन्दर्य ने ही लैला की मुखाकृति को सुन्दर बनाया जिसके प्रत्येक केश पर मजनूं लुब्ध हो गया। उसने शीरी के मधुर अधरों की रचना की जिसपर परवेज़ और फ़रहाद का हृदय आसक्त हो गया। उसके

कारण ही युसुफ का मस्तक उन्नत हुआ और उसपर दृष्टि डालते ही जुलेका मिट गयी।¹

भारत में सूफ़ी मत का प्रचार प्रसार हुज्वेरी के आगमन के पश्चात होता है। वे अफ़ग़ानिस्तान के रहने वाले थे और अपने जीवन के अंतिम समय (1026) में वे लाहौर में रह रहे थे। वैसे सूफ़ी मत का भारत में क्रमबद्ध इतिहास 1190 ई. से यानी ख्वाज़ा मुईनुद्दीन चिश्ती के आगमन से मिलाता है वे कुछ दिन लाहौर में रहे और बाद में दिल्ली चले आये जहाँ पृथ्वीराज राज कर रहे थे। ख्वाज़ा मुईनुद्दीन चिश्ती का प्रभाव भारतीय जन-जीवन पर इतना गहरा पड़ रहा था कि अज़मेर के ब्राह्मण पुरोहित पृथ्वीराज से उनकी शिकायत किये। बाद में वे ब्राह्मण भी ख्वाज़ा मुईनुद्दीन चिश्ती के प्रभाव को स्वीकार करते हुए उनकी शिष्यता तक ग्रहण किये।

ख्वाज़ा बख्तियार काकी, चिश्ती संप्रदाय के दूसरे प्रमुख संत हुए। वे भी बगदाद से भारत आये थे। ख्वाज़ा मुईनुद्दीन चिश्ती और इल्तुतमिश के आग्रह तथा अनुनय-विनय पर दिल्ली आये इसके पहले वे मुल्तान में रह रहे थे। इनके शिष्य बाबा फ़रीद हुए जो पंजाब में रहते थे। बाबा फ़रीद के शिष्यों में ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन औलिया, बदरुद्दीन ईशाक, शेख जमालुद्दीन, अली अहमद साबरी और शेख आरिफ़ प्रमुख थे। बाद में चिश्तिया संप्रदाय दो अलग-अलग शाखाओं में औलिया (बदायूँ) और साबरी (बाराबंकी) में विभाजित हुआ।

अमीर खुसरो निज़ामुद्दीन औलिया के शिष्य थे। हिन्दी साहित्य में इनका प्रभाव सूफ़ी मत-प्रचार और रचना शैली की नवीनता दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय है। सूफ़ी मत के सिद्धांत और भारतीय गृहस्थ जीवन की भाव-संवेदना दोनों मिलाकर तैयार खुसरो की रचनाएँ भारतीय परिवेश की जीवन संवेदनाओं को अधिक सूक्ष्मता से उद्घाटित करती हैं। इनके पहले कोई भी दूसरा सूफ़ी संत, भारतीय गृहस्थ जीवन और उनके प्रेम-संबंधों की नैसर्गिक अनुभूतियों का इतना सफल उद्घाटन अपने साहित्य में नहीं कर पाया था। इन्होंने हिन्दी के सूफ़ी प्रेमाख्यानक शीरी-खुसरो (मसनब) में सम्भोग का चित्रण करते हुए, उससे भारतीय भारतीय सूफ़ी प्रेमाख्यानक का आरम्भ करते हैं। इसके अतिरिक्त अमीर खुसरो ने मजनुँ का विवाह नौफल की लड़की से कराया है पत्नी के होते हुए भी मजनुँ का प्रेम लैला के प्रति कम नहीं होता। खुसरो द्वारा प्रयुक्त भारतीय प्रेम-कथा के लक्षणों को 'ज़ामी' ने भी अपने प्रेमाख्यानकों में अपनाया है।

अपनी कृति 'युसुफ-जुलेका' में ज़ामी ने जुलेका का विवाह मिस्र के वज़ीर से कराया है लेकिन युसुफ से जुलेका का चित्त ज़रा भी विमुख नहीं होता। ज़ामी ने फिर से जुलेका का विवाह कराकर अपनी कृति की कथा अन्विति प्रस्तुत की है रचनाकार का यह निर्णय अबके आख्यान रचना-परम्परा से इस कृति को थोड़ा अलग बना देता है। भारतीय प्रेमाख्यानक की संवेदना और शैली को फ़ारसी प्रेमाख्यानको से मेल करने का श्रेय फिर भी खुसरो को ही जाता है। बाद में यह परम्परा अधिकांश सूफ़ी प्रेमाख्यानकों में कथा-रूढ़ि के रूप में प्रयुक्त

होने लगी। अमीर खुसरो का यह प्रयास उनकी मृत्यु के पचास वर्ष के बाद हिन्दी के सूफ़ी प्रेमाख्यानकों में फलीभूत हो पाता है। प्रेरणा स्रोत और प्रभाव के रूप में निज़ामी का अमीर खुसरो पर गहरा प्रभाव देखा जा सकता है लेकिन भारतीय कवि होने के कारण खुसरो पर भारतीयता की छाप अधिक है। निज़ामी और अमीर खुसरो दोनों कवियों के प्रेमाख्यानकों की नायिकाओं का विवाह उनके प्रेमी या आशिक से न होकर किसी दूसरे से होता है। इससे प्रेमी नायक-नायिकाओं का जीवन और उनका प्रेम, तरह तरह के विरह जनित दुःख और संताप की दारुण अवस्थाओं के चित्रण के लिए, कवि को पर्याप्त स्थान प्रदान करता है। इससे अलग उत्तर भारत की आख्यानों की नायिकाएं प्रायः कुमारियाँ होती थीं। उनका विवाह उनके प्रेमी से ही होता है, जो उनके लिए प्रेम में पगकर, तमाम कष्टों को सहता हुआ उनके पास आता है। खुसरो भारतीय प्रेमाख्यान परम्परा को सूफ़ी प्रेमाख्यानों से जोड़कर हिन्दी की अलग सूफ़ी प्रेमाख्यान परंपरा विकसित करने का रास्ता खोलते हैं। प्रेम की व्यंजना हिन्दी के सूफ़ी प्रेमाख्यानकों का केन्द्रीय तत्व है इस व्यंजना का आधार ईश्वर का स्वरूप है जिसके विषय में प्रायः हिन्दी के सभी सूफ़ी एक-मत हैं। यह भारतीय अद्वैत और रहस्य से मिलता-जुलता है। जायसी का कथन देखें—

'अलख, अरूप, अबरन सो करता, वह सबसे सब ओहि सो करता।

परगट, गुपुत, सो सरब बियापी, धरमी चिन्ह चीन्ह नहि पापी।

ना ओहि पूरा न पिता न माता, ना ओहि कुटुंब न कोई संग नाता।।²

इसी प्रकार चित्रावली में 'उसमान' ने भी ईश्वर को 'अमूरत' कहा है लेकिन उसके द्वारा मूरत बनाने की बात को भी वे स्वीकार करते हैं—

'आप अमूरति, मुरति उपाई, मूरति भाँति तहाँ समाई।'³

इस दृष्टि से यदि ज्ञानदीप के रचनाकार 'शेख नबी' को देखा जाय तो वे भी ईश्वर को पाक, अलख और अमूरत मानते हैं दृ

'पाक पवित्र एक ओह करता, अलख अमूरत पातक हरता।।'⁴

इस ईश्वर की प्राप्ति या दीदार ही इन 'सालिकों' का अंतिम लक्ष्य है जिसको पाने के लिए आत्मा की शुद्धि आवश्यक है। रूह को खुदा के रूबरू करने, उसके दीदार के लायक बनाने के लिए सालिक या साधक को कई तरह के मकामात से होकर गुजरना पड़ता है। क्योंकि उनके आध्यात्मिक जीवन की साधना एक 'यात्रा' ही है इसलिए यात्रा से गुजरते हुए उन्हें ये मकामात हासिल करने ही होते हैं। 'फ़ना' के 'तरीक़े' ही सालिक को 'वस्ल' के लिए तैयार करते हैं। खुदा से रूबरू होने के लिए सत्तर हजार पदों को हटाना पड़ता है य इमाम गज़ाली

के शब्दों में—

‘अल्लाह सत्तर हजार पर्दों के भीतर है जिसमें से कुछ प्रकाशवान हैं और कुछ अन्धकार—मय और अगर वह (सालिक या साधक) इन पर्दों को हटा ले तो जिसकी भी दृष्टि उसपर पड़ेगी वह उसके तीक्ष्ण प्रकाश द्वारा जल जायेगा।⁵

जायसी ने जिसे ‘चार बसेरा’ या ‘ठिकान’ कहा है वे चार विशिष्ट अवस्थाएँ ही हैं यह मुकामात, स्थिति या बसेरा ऊँ आभ्यन्तर अवस्थहओं के अधीन हैं जो परमात्मा के अनुग्रह से कल्ब या हृदय के बीच उपस्थित होती है और ‘अहवाल’ के रूप में जानी जाती है। अहवाल की अवस्था में भक्त अपने आप को भी भूल कर परमात्मा के प्रेम में मस्त होकर झूमने लगता है जायसी के यहाँ इस मुकाम या स्थिति को देखें—

‘क्या जो परमतत्व मन लावा घूम माति, सुनि और न भावा।

जस मद पिए घूम कोई, नाद सुने पे घूम।

तेहिं तें बरजे नीक है, चढ़े रहसि कई दूम।।⁶

सालिक को ये सरे मकामात उस तीक्ष्ण प्रकाश को सहन करने के लायक बनाते हैं। अधिकांश सूफ़ी संत परमात्मा की ओर बढ़ रहे साधक को दस अवस्थाओं को प्राप्त करने की बात बताते हैं। कुछ तो सात ही मंजिल का जिक्र करते हैं जिसमें 1000 परदे होते हैं। ‘प्रत्येक मंजिल की विशिष्टताओं एवं गुणों को प्राप्त किये बिना अगली मंजिल पर जाना संभव नहीं है। इन मंजिलों को पार करने के लिए साधना के साथ भगवान की कृपा आवश्यक होती है क्योंकि भगवान की कृपा के बिना सूफ़ी मार्ग पर चलना संभव नहीं। विभिन्न अवस्थाएँ स्वयं अर्जित होती हैं लेकिन पद ईश्वर प्रदत्त।⁷

सूफ़ी मत में साधक की अवस्थाओं का भी उल्लेख है। शरीयत धर्म ग्रंथों के विधि—निषेध का सम्मान सहित पालन।² तरीकत दृबाहरी क्रिया कलापों या मोह के बंधनों से परे हृदय की शुद्धता से ईश्वर का ध्यान करना।³ हकीकत— भक्ति और उपासना से सत्य का सम्यक बोध हो जाने की स्थिति जहाँ साधक तत्त्वदर्शी हो जाता है।⁴—मारफ़त—सिद्धावस्था की स्थिति जहाँ साधक की आत्मा ईश्वर की सुन्दरतम प्रकृति अर्थात् जमाल में समाहित होकर प्रेममय हो जाती है। जायसी के द्वारा अखरावट में इन अवस्थाओं के बारे में बताया गया है कि—

‘कही सरीयत चिरती पीरू उधरति असरफ़ औ जहंगीरू।

राह हकीकत परै न चूकी, पैठि मारफ़त मार बुडूकी।।⁸

जायसी ने शरीयत या विधि को अधिक महत्त्व दिया है जिसपर पैर रखे बिना कोई आगे बढ़ ही नहीं सकता दृ ‘साँची राह सरीयत जेहि बिसवासन होई।

पाँव रखे तेहिं सीढ, निरभम पहुचै सोई।।⁹

सूफ़ियों का एकेश्वरवाद शुद्ध रूप से सलाम का एकेश्वरवाद नहीं था बल्कि उससे कहीं उदार था, बहुत कुछ अद्वैत से मिलता—जुलता। सूफ़ी सीधे खुदा से स्वयं को जोड़ते थे जबकी सलाम मत में (खुदा से मिलाने में) मुहम्मद साहब आदि मध्यस्थ जरूर आते हैं। शुक्ल जी ने स्पष्ट किया है कि— ‘स्थूल दृष्टि वाले पैगम्बरी एकेश्वरवादियों के निकट यह कहना कि ‘आत्मा और परमात्मा एक ही है’ या ‘मैं ही ब्रह्म हूँ’ कुफ़्र की बात है। इसी से सूफ़ियों को कट्टर मुसलमान एक तरह के काफ़िर समझते हैं।¹⁰

वे तो साफ और स्वतन्त्र भाव में कर्मकांड, मध्यस्थ आदि से दूर आत्मा की साधना की बात करते थे। जहाँ ईश्वर के अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं होता स्वयं की भी सत्ता तिरोहित करके उसके दीदार में मस्त होकर झूम उठने की बात करने वाले सूफ़ी कहाँ तक किसी और को महत्त्व दे पाते, अद्वैत की साधना ही उनका चरम लक्ष्य था। इसी लिए वे कुछ रोचक कथाओं के माध्यम से अपनी भावनाओं का प्रचार करते थे। जैसे— क्रयामत के दिन जब मुहम्मद साहब खुदा के सामने सबको पेश करने लगे तब कुछ लोग भीड़ से अलग दिखाई देंगे। मुहम्मद साहब कहेंगे ऐ खुदाबंद ! ये लोग कौन हैं, मैं नहीं जानता। खड़ा उसवक्त कहेगा, ऐ मुहम्मद! जिनको तुमने पेश किया है वे तुम्हें जानते हैं मुझे नहीं जानते। ये लोग मुझे जानते हैं तुम्हें नहीं जानते।¹¹ सूफ़ियों का अद्वैत शुद्ध रूप से साधना का विषय रहा है। ईश्वर का अनुग्रह, उसका दीदार, उसके प्रेम की मस्ती ही इनकी साधना का चरम लक्ष्य था। शुक्ल जी के अनुसार दृ ‘मुहम्मद साहब के ढाई सौ वर्ष पीछे इनकी चिंतन पद्धति का विकास हुआ और ये सलाम के एकेश्वरवाद (तौहीद) से अद्वैतवाद पर जा पहुँचे। जिस प्रकार हमारे यहाँ अद्वैतवादी, विशिष्टाद्वैतवादी, शुद्धाद्वैतवादी और द्वैतवादी आदि सब श्रुतियों को ही आधार मानकर उन्हीं के वचनों को प्रमाण में लाते थे उसी प्रकार वे कुरआन के वचनों की अपने ढंग पर व्याख्या करते थे। कहते हैं कि अद्वैतवाद का बीज इन्हें कुरआन के वचनों से ही मिला।¹²

सन्दर्भ

1. युसुफ़ एंड जुलेका रु अनुवाद दृग्रिफीथ , पृ.—21।
2. पद्यावतः मलिक मुहम्मद जायसी, सम्पादक—डॉ.वाशुदेव शरण अग्रवाल, छंद—7।
3. चित्रावली दृ उसमान, सम्पादक—श्री जगमोहन वर्मा, पृ.—2।
4. ज्ञानदीप रु शेख नबी, पृ.—1।
5. सूफ़ी काव्य संग्रह रु इमाम गजाली, पृ.—43।
6. ओके जागरण और हिन्दी साहित्य, आचार्य रामचंद्र शुक्ल पृ.—145।
7. इन्फ्लुएंस ऑफ़ स्लाम ऑन इंडियन कल्चर रु ताराचंद, पृ.—510।
8. अखरावट रु मलिक मुहम्मद जायसी।

9. लोकजागरण और हिन्दी साहित्य रू आचार्य रामचंद्र शुक्ल पृ.
-145 |
10. वही पृ.-139 |
11. वही पृ.-139 |
12. वही पृ.-140 |